कच्छ क़रार
समझौता नहीं,
समर्पण!

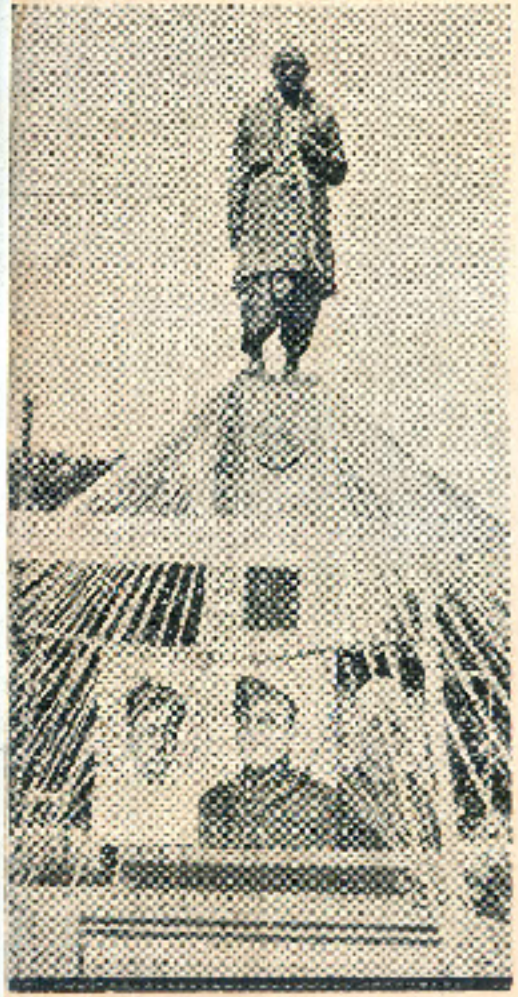

भारतीय जनसंघ

कच्छ समझौते पर १९ अगस्त, १९६५ को

श्री अटल बिहारी वाजपेयी का राज्य सभा में भाषण

महीदया, ३ मई १९६५ को इस सदन ने एक संकल्प किया था। वह एक पवित्र संकल्प था जो सर्वसम्मति से किया गया था। उस संकल्प का अन्तिम भाग मैं पढ़ना चाहूंगा :

"With hope and faith this House affirms the firm resolve of the Indian people to drive out the aggressor from this sacred soil of India."

आज जब हम कच्छ समझौते पर विचार कर रहे हैं तो उसको करने की पहली कसौटी यह है कि क्या ३ मई का हमारा पुनीत संकल्प पूरा हो गया? क्या पाकिस्तान कच्छ के रण को पूरी तरह खाली करके चला गया? क्या अब कच्छ के रण में पाकिस्तान का अस्तित्व नहीं है? क्या वहां पूरी तरह से हमारा प्रभुत्व कायम हो गया? आज प्रधान मंत्री ने सवेरे कहा कि सारा कच्छ का रण खाली हो गया है। क्या सारे रण में वह बीस मील की पट्टी नहीं आती जिसमें पाकिस्तान को गश्त करने का अधिकार दिया गया है? क्या वह रण का हिस्सा नहीं है? क्या वह पवित्र नहीं है? प्रधान मंत्री ने कहा था :

There is no question of surrendering any part of our territory, not an inch of it.

यही बात गृह मन्त्री श्री गुलजारीलाल नन्दा ने बोली थी। १४ मई को जब इस सदन की बैठक स्थगित होने जा रही थी तब उन्होंने कहा था :

"We will not succumb to pressure. There is no question of succumbing to any force, to any aggression and there can be no question of our surrendering even an inch of our sacred soil there or any where else."

क्या २० मील एक इंच से भी छोटा होता है?

कोई भी यह नहीं कह सकेगा कि इंच इंच को आक्रमणकारी के चंगुल से मुक्त करने की हमारी प्रतिज्ञा पूरी हो गई। प्रधान मंत्री जी कहते हैं कि कच्छ

के रण से पाकिस्तान की सेनाएं हट गईं। मेरा कहना है सेनाएं तो हमारी भी हट गईं। पाकिस्तान की सेनाएं इसलिये हट गईं कि वे आक्रमणकारी की सेनाएं थीं, वे अन्तर्राष्ट्रीय कच्छ के रण में घुसी थीं। किन्तु रण कच्छ से हमारी सेनाएं क्यों हट गईं? यदि कच्छ का रण हमारा है, यदि वह भारत का भाग है, तो हमारी सेनाएं वहां से क्यों हटीं।

कहा जाता है कि १ जनवरी १९६५ को हमारी सेनाएं वहां नहीं थीं। यह तारीख कैसे आई इसकी चर्चा मैं बाद में करूंगा। लेकिन मैं यहां कहना चाहता हूं कि यह ठीक है कि १ जनवरी १९६५ को हमारी सेनाएं वहां नहीं थीं किन्तु क्या हमें वहां अपनी सेनाएं रखने का अधिकार भी नहीं था? क्या आज वह अधिकार कायम है? क्या आज हम चाहें तो अन्तर्राष्ट्रीय सीमा तक अपनी सेनाएं भेज सकते हैं? कोई जमीन किसी देश का अंग है या नहीं इसको जानने की जो कुछ कसौटियां हैं उनमें एक कसौटी यह भी है कि क्या वह देश उस जमीन पर अपनी सेनाएं रख सकता है? यह सर्वप्रभुता की एक निशानी है। कच्छ का रण हमारा है, किन्तु हम वहां सेना नहीं रख सकते। हमने सेना रखने के अधिकार का परित्याग कर दिया। पाकिस्तान के आक्रमण के बाद हम वहां फौज नहीं रखेंगे। क्या समझौते की यह शर्त हमारी प्रभुसत्ता पर एक अतिक्रमण नहीं है? क्या यह ३ मई की वापसी के खिलाफ नहीं है? उस समय हमने सेना नहीं रखी क्योंकि हमको सेना रखने की आवश्यकता नहीं समझी। यह निर्णय हमारा अपना निर्णय था, वह एक स्वतंत्र देश का निर्णय था। वह किसी के दबाव में आकर, किसी के बल प्रयोग के सामने झुक कर नहीं किया गया था। मगर आज का निर्णय हमारा अपना निर्णय नहीं है। पाकिस्तान ने कच्छ में आक्रमण किया, उस आक्रमण के लिए उसको सजा देने के बजाय हम उसके पाप पर पर्दा डाल रहे हैं, अपनी सर्वप्रभुता के अधिकार का परित्याग कर रहे हैं और प्रधानमंत्री जी चाहते हैं कि हम इस स्थिति की ओर से आंखें मूंद लें।

प्रधानमंत्री ने कहा—कच्छ के रण में हमारी पुलिस है। कच्छ के रण में पुलिस तो पाकिस्तान की भी है! फर्क केवल इतना ही है कि उनकी पुलिस थोड़ी जमीन पर है और हमारी पुलिस ज्यादा जमीन पर है। वे हमारी जमीन पर क्यों हैं? उन्हें हमने गश्त का अधिकार कैसे दिया? इतना ही नहीं, कच्छ के रण में हम जितनी पुलिस चाहें नहीं रख सकते। इस अपमानजनक समझौते में यह कहा गया है कि छड़बेट में जितनी पुलिस हमारी १ जनवरी १९६५ को थी हम उतनी ही पुलिस रख सकते हैं, ज्यादा नहीं। हम कंजरकोट में चौकी कायम नहीं कर सकते। वहां हम गश्त करने के लिये जा सकते हैं, किन्तु चौकी नहीं बना सकते, इसलिये कि वहां पहले हमारी चौकी नहीं थी। पहले

चौकी न रखने का हमारा अपना निर्णय था, उसमें पाकिस्तान भागीदार नहीं था। अब हम छड़बेट के अलावा कहीं चौकी नहीं बना सकते। हम छड़बेट में जितने सिपाही रखना चाहें नहीं रख सकते। हम बियारबेट में चौकी नहीं बना सकते। हमारे बहादुर जवानों ने सरदार और सिपोलोट की चौकियां अपना जौहर दिखा कर वापस ली थी। लेकिन आज वहां हम चौकी नहीं कायम कर सकते। प्रधानमंत्री ने १५ अगस्त को लाल किले पर झंडा फहराया। मैं पूछना चाहता हूं कि क्या कंजरकोट में तिरंगा फहराया गया? कोई भाई का लाल कंजरकोट में झंडा फहराने के लिये होना चाहिये था। प्रधानमंत्री कहते हैं कि हमने कंजरकोट वापिस ले लिया। किस अर्थ में वापिस ले लिया? हम वहां चौकी नहीं बना सकते, हम वहां तिरंगा झंडा नहीं फहरा सकते। और पाकिस्तान को भी हमने कंजरकोट एक गश्त करने का अधिकार दे दिया। आज स्थिति क्या है? पाकिस्तान की सेनाएं अंतर्राष्ट्रीय सीमा पर जमी हैं, वे पीछे नहीं हटी, वे युद्ध के लिये सन्नद्ध हैं और हमारी सेना कच्छ के रण को खाली करके पीछे आकर बसी है। यदि परिस्थिति बिगड़ गयी, पुनः आक्रमण हो गया तो सेनाएं न रखने की जो सजा हमें कच्छ में पहले आक्रमण के समय मिली क्या वह फिर से नहीं भुगतनी पड़ेगी।

महोदय, यह समझौता एक और भी आधार पर अपमानजनक है। प्रधानमंत्री जी कहते हैं कि मैंने वचन दिया था कि १ जनवरी १९६५ की स्थिति जब तक कायम नहीं होगी पाकिस्तान से बात नहीं करूंगा और वह दावा करते हैं कि १ जनवरी १९६५ की स्थिति कायम हो गयी है। मेरे लिये यह अभी भी रहस्य है कि १ जनवरी १९६५ की तिथि कैसे आई। क्या यह इसलिये आई कि सरकार ने कहा था कि कच्छ के रण में पाकिस्तान पहली बार २४ जनवरी को घुसा? यदि यह सच है तो मैं १ जनवरी १९६५ की स्थिति के कायम होने का एक ही अर्थ समझ सकता हूं और वह यह कि १ जनवरी आक्रमण के पहले की तिथि थी। सरकार की ओर से कहा गया था कि १ जनवरी १९६५ से पहले पाकिस्तान का कच्छ पर आक्रमण नहीं था, उसकी गश्त नहीं थी, उसकी घुसपैठ नहीं थी, घुसपैठ शुरू हुई २५ जनवरी से। इसलिये हमने १ जनवरी १९६५ की तिथि पर आपत्ति नहीं की। किन्तु हमारा माथा ठनकना चाहिये था कि प्रधानमन्त्री १ जनवरी १९६५ की बार-बार रट क्यों लगा रहे हैं। लेकिन जब सरकार की ओर से यह वक्तव्य दिया गया कि पाकिस्तानी पहली बार २५ जनवरी को घुसे हैं तो हमने आपत्ति करना ठीक नहीं समझा और हमने सोचा कि आक्रमण के पूर्व की स्थिति कायम होगी। किन्तु ऐसा नहीं हुआ। आज हम वहां सेनायें नहीं रख सकते और इसका समर्थन किया जा रहा

है १ जनवरी १९६५ के नाम पर; पाकिस्तान के गश्त करने के अधिकार की वकालत की जा रही है। १ जनवरी १९६५ के नाम पर, और कहा जा रहा है कि प्रधानमंत्री ने अपना वचन पूरा कर दिया है। १ जनवरी १९६५ की बात इसी संदर्भ में कही गयी थी कि पाकिस्तान की घुसपैठ २५ जनवरी से शुरू हुई है और अगर १ जनवरी १९६५ की स्थिति आयेगी तो पाकिस्तानी किसी भी रूप में कच्छ में विद्यमान नहीं होंगे।

मैं यह जानना चाहता हूं कि क्या १ जनवरी १९६५ की बात मानने से पहले गुजरात की सरकार से विचार विमर्श किया गया था? क्या इस समझौते पर हस्ताक्षर करने से पहले गुजरात सरकार से कहा गया था कि पाकिस्तान ने १ जनवरी ६५ के पहले गश्त करने के जो प्रमाण दिये हैं उन प्रमाणों का गुजरात सरकार खंडन करे। प्रधानमंत्री जी ने कल लोकसभा में कहा कि गुजरात के अफसरों की बात हुई थी, किन्तु समझौता करते समय हमने गुजरात की सरकार से नहीं पूछा। मैं जानना चाहता हूं कि सदन में समझौते की अपनी प्रारम्भिक स्वीकृति देते समय और जब पाकिस्तान की सरकार ने गश्त के अधिकार के बारे में ब्रिटेन की सरकार को सबूत पेश किया तो क्या प्रधानमंत्री ने गुजरात की सरकार के सबूत को उनके सामने रखा? कुछ जानकारी मेरे पास है जिसे मैं सदन के सामने रखना चाहता हूं और जिससे स्पष्ट होगा कि कच्छ के जिस क्षेत्र में हमने पाकिस्तान को गश्त करने का अधिकार दिया है वह अधिकार उनके रिकार्ड से साबित नहीं होता। मैं नहीं जानता पाकिस्तान ने कौन से रिकार्ड दिखाये। कहते हैं उन्होंने कुछ गश्त के रजिस्टर दिखाये। क्या रजिस्टर जाली नहीं बन सकते? जो लोग व्यापार करते हैं वे जानते हैं कि रजिस्टर कैसे बनते हैं, कैसे बदलते हैं। और अगर उनका रजिस्टर देखा गया तो क्या हमारा रजिस्टर भी देखा गया? गुजरात की स्टेट रिजर्व पुलिस भिन्न-भिन्न तारीखों में कच्छ के रण में गश्त करती रही है अब यह कोई रहस्य का विषय नहीं है। उन तारीखों का उद्घाटन हो चुका है। मैं सब तारीखें नहीं गिनाऊंगा, मैं एक ही तारीख की ओर संकेत करता हूं। ६ फरवरी को भारत की प्रार्थना पर पाकिस्तानी रेन्जर्स के एक इन्सपेक्टर की और छडबेट में हमारे गैरीजन के एक आफिसर कमाण्डिंग की बैठक हुई जिसमें पाक आफिसर ने माना कि डिंग सुराई के बीच जो गाड़ियों के निशान हैं वे ताजा निशान हैं। यह भी माना गया कि पहले कुछ ऊंट निकले थे, लेकिन डिंग सुराई की सड़क पर, गाड़ियों पर, गाड़ियों के निशान नहीं थे। ७ जनवरी को हमारे गश्त करने वाले वहां गये तब कोई सड़क नहीं थी। हमारे गैरीजन के असिस्टेंट कमाण्डेन्ट जब वहां गये थे, उन्होंने रिपोर्ट नहीं दी कि वहां सड़क देखी गयी है। बाद में वहां एक

हेड कान्सटेबल गश्त करने गया था, उसने भी निशान नहीं देखे। इसीलिए हमारी सरकार ने कहा था कि २५ जनवरी से पहले वहां पाकिस्तान की गश्त नहीं थी, उस क्षेत्र में पाकिस्तान का प्रवेश नहीं था। मैं जानना चाहता हूं कि प्रधानमंत्री इस सबूत पर अड़े क्यों नहीं? उन्होंने क्यों नहीं कहा कि जो भी गश्त शुरू हुई वह २५ जनवरी या उसके बाद शुरू हुई, १ जनवरी के पहले नहीं।

यदि एक क्षण के लिये यह मान भी लिया जाय कि पाकिस्तान १ जनवरी से पहले गश्त करता था तो वह गश्त चोरी छिपे होती थी। वह गश्त एक आक्रमण था, वह गश्त १९६० के समझौते के खिलाफ थी, क्योंकि समझौते में जो ग्राउन्ड रूल्स बने उनमें कहा गया है कि:

"Each side will inform the other about actual patrol by it or any change thereto if it falls within fifty yards of the boundry."

अगर सीमा के ५० गज के भीतर भी गश्त हो तो पाकिस्तान को हमें खबर देनी चाहिये थी। यह गश्त तो हमारी सीमा के भीतर होती थी। उन्होंने ग्राउण्ड रूल्स का उल्लंघन कर दिया; एक दृष्टि से यह हमारी धरती पर आक्रमण किया। चोरी छिपे सारा काम चलता रहा और सरकार को पता नहीं लगा। अथवा पता लगा तो संसद को अथवा देश को पता नहीं लगने दिया। दोनों दृष्टियों से सरकार का निकम्मापन साबित होता है। अगर पाकिस्तान १ जनवरी १९६५ से पहले कच्छ के रण में गश्त कर रहा था तो यह सरकार अपने पद पर रहने के योग्य नहीं है, यह सीमाओं की रक्षा करने में समर्थ नहीं है, यह सरकार इंच इंच भूमि की रक्षा का संकल्प करने लायक नहीं है। सरकार में अगर स्वाभिमान है तो उसे अपना इस्तीफा दे देना चाहिये। या फिर शास्त्री जी कहें कि १ जनवरी १९६५ के पहले पाकिस्तान के गश्त की बात मुझे मालूम नहीं थी। यह भी आत्म-निन्दा करना होगा। और यदि मालूम नहीं था फिर भी आप अदालत में अड़ सकते थे। जो हमला था उसे कानूनी जामा नहीं पहनाया जा सकता; जो चोरी से घुसपैठ थी उसे अधिकार का रूप नहीं दिया जा सकता। पाकिस्तानी कच्छ के रण में चोरी से घुसे; हमें अन्धकार में रखकर घुसे तो क्या हम दिन दहाड़े उनको उनका अधिकार मान लें? प्रधानमंत्री को सम्पूर्ण रण के खाली होने पर बल देना चाहिये था। और यदि पाकिस्तान कच्छ के रण को खाली न करता तो हमें सारे परिणामों को भुगतने के लिये तैयार रहना चाहिये था। किन्तु शास्त्री जी ने ऐसा नहीं किया। मुझे सन्देह है, यह समझौता दिल्ली में हुआ है या लंदन में हुआ है?

मन्त्रिमण्डल के कमरे में हुआ है, या बकिंघम राजमहल के किसी कक्ष में हुआ है? इस समझौते में ब्रिटेन का दबाव कितना है? प्रधानमंत्री जी को ६ मई की प्रतिज्ञा क्यों नहीं याद रही? क्यों नहीं देश को दिये गये आश्वासनों का उन्हें स्मरण रहा?

महोदय, प्रधानमन्त्री जी ने बार-बार इस सदन में कहा कि हम कच्छ के रण में कोई क्षेत्रीय विवाद नहीं मानेंगे। १९५९-६० के समझौतों का स्मरण उन्हें विरोधी दलों ने दिलाया है, सरदार स्वर्णसिंह ने नहीं, जो वह आपत्तिजनक और गलत समझौता करके आये थे। उन्हें सदन में जवाब देना चाहिये कि आज जिन १९५९-६० के समझौतों का हवाला देकर कच्छ में पाकिस्तान के पाप पर पर्दा डालने का प्रयत्न किया जा रहा है, वे समझौते कैसे किये गये? समझौते में यह तो कहीं लिखा नहीं है कि पाकिस्तान ने ३५०० वर्ग मील पर दावा किया था, अन्यथा हम उस पर आपत्ति करते। लेकिन सरदार स्वर्णसिंह को मालूम था कि पाकिस्तान का दावा क्या था। फिर भी उन्होंने सदन को, देश को चेतावनी नहीं दी। पाकिस्तान अपना दावा और तरीकों से भी बता चुका था। दो साल पहले जब प्रेसीडेन्ट अयूब अमरीका गये थे तो पाकिस्तान के राजदूतावास ने वहां एक ऐसा नक्शा बांटा था जिसमें आधा रण नहीं, पूरा कच्छ का रण उनके हिस्से में दिखलाया गया था। यह नक्शा वाराणसी से प्रकाशित "आज" के मालिक नई दिल्ली लाये थे। आज के प्रधानमंत्री उस समय मंत्री नहीं थे, वे कामराज योजना में पदत्याग कर गये थे। वह नक्शा उन्होंने देखा और उसे विदेश मंत्रालय को भेजा। विदेश मंत्रालय ने उस नक्शे पर क्या किया, कोई नहीं जानता। प्रधानमंत्री को १९५९-६० के समझौते का स्मरण नहीं रहा, हमने स्मरण दिलाया तो कहा गया कि उस समझौते में हमने क्षेत्रीय विवाद नहीं माना। हमारी सीमा तय है, नक्शे पर अंकित है; केवल यह निश्चित होना बाकी है कि जो सीमा नक्शे पर है वह धरती पर कहां खींची जाय। केवल सीमांकन होना है, सीमा का निर्धारण नहीं होना है। शास्त्री जी ने बार-बार कहा कि हम कोई क्षेत्रीय विवाद नहीं मानेंगे। आश्चर्य है, प्रधानमंत्री इस बात पर भी नहीं अड़े।

कहा जाता है, १९५९-६० के समझौते हमारे मार्ग में बाधक थे। क्या पाकिस्तान ने १९५९-६० के समझौतों का पालन किया? मैंने उदाहरण दिया है कि उसने बाकायदा उनको तोड़ दिये। समझौते की एक शर्त यह भी थी कि भारत और पाकिस्तान में से कोई बल प्रयोग नहीं करेगा, कोई यथास्थिति को नहीं बदलेगा। आक्रमण करने की छूट होने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता। किन्तु पाकिस्तान ने कच्छ के रण पर खुला आक्रमण किया। हमारे प्रतिनिधि

श्री चक्रवर्ती ने संयुक्त राष्ट्रसंघ को चिट्ठी लिख कर कहा कि यह खुला आक्रमण है, पाकिस्तान का दावा बेहूदा है और अपने बेहूदा दावों को मनवाने के लिये वह बलप्रयोग कर रहा है, कच्छ के रण में कोई क्षेत्रीय विवाद नहीं है। प्रश्न यह है कि आक्रमण के तुरन्त बाद हमने १९५९-६० के समझौतों को भंग क्यों नहीं कर दिया? क्या समझौते एकतरफा होते हैं? दूसरा पक्ष समझौते का पालन न करे, उन्हें तोड़ता जाय, तो क्या हम एक तरफ से समझौतों से बंधे रह सकते हैं? सारा देश प्रधानमंत्री का साथ देता, सभी विरोधी दल सरकार की इस नीति का समर्थन करते कि कच्छ के रण में पाकिस्तान ने आक्रमण करके उन समझौतों को ही तोड़ दिया है और अब उनके पालन का कोई प्रश्न पैदा नहीं होता। यह नहीं किया गया।

मैंने आज प्रातःकाल जो कुछ कहा था उसको मैं दोहराना हूं। प्रधानमंत्री १९५९-६० के समझौतों से भी आगे बढ़ गये हैं। मामला न्यायाधिकरण को सौंपा जा रहा है। किन्तु न्यायाधिकरण वह नहीं है जो सरदार स्वर्णसिंह और शेख के समझौते के अन्तर्गत परिकल्पित किया गया था। अब तीनों जज विदेशी होंगे। न्यायाधिकरण का निर्णय हम पर लागू होगा और किसी भी आधार पर हम उसे चुनौती नहीं दे सकेंगे। दुनिया में ऐसे न्यायाधिकरण कहीं नहीं बनते। यदि न्यायाधिकरण का कोई सदस्य अपने अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करे या पूरा न्यायाधिकरण अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण करे तो क्या होगा? यदि कोई सदस्य भ्रान्त हो जाये या भ्रष्ट हो जाय तो क्या होगा? मान लीजिये न्यायाधिकरण प्रमाणों के आधार पर निर्णय देने से इन्कार कर दे तो क्या होगा? मुझे डर है और मैं अपना डर प्रकट करना चाहता हूं। ये कागज के सबूत, ये नक्शे, ये रजिस्टर धरे रह जायेंगे। पाकिस्तान कहेगा—यह जमीन नहीं है, यह समुद्री मार्ग है और समुद्र में बीच में, मंझधार में, रेखा तय होती है। यह कहना कि भारत का नक्शा रहने दो, कच्छ के रण पर भारत का प्रभुत्व था यह ठीक है किन्तु आपको नई सीमा तय करनी है और समुद्र या नदी में बीच में सीमा होती है। यदि न्यायाधिकरण ने पाकिस्तान की बात मान ली, परमात्मा न करे ऐसा हो, किन्तु यदि ऐसा हो गया तो हम क्या करेंगे? यदि न्यायाधिकरण ने प्रमाणों के आधार पर निर्णय नहीं दिया तो हम क्या करेंगे? किसी भी आधार पर चुनौती न देने की बात मानकर हमने अपने हाथ पैर काट लिये हैं। इतना ही नहीं, न्यायाधिकरण तब तक भंग नहीं होगा जब तक उसका निर्णय कार्यरूप में परिणत नहीं हो जाता। वे हमारी छाती पर बैठे रहेंगे और अपना निर्णय, ठीक या नहीं, मनवा कर ही जायेंगे। भारत हीला-हवाला करेगा तो राष्ट्रसंघ की निन्दा का डर दिखाया जायगा। ब्रिटेन

और अमरीका हमें धमकायेंगे।

क्या प्रधानमंत्री को ऐसा समझौता करने का अधिकार था? संसद की पीठ के पीछे और देश को विश्वास में लिये बिना भारत की क्षेत्रीय अखंडता को, भारत की प्रभुसत्ता को विदेशी पंच फैसले के लिये सौंपना संविधान की खुली अवज्ञा है, लोकतंत्र का अपमान है और संसद के विशेषाधिकार का हनन है। प्रधानमन्त्री जी को इस तरह के समझौता करने का अधिकार नहीं था। क्या इस सदन को, इस संसद को, सरकार के गलत समझौतों पर मुहर लगाने की मशीन मात्र समझा गया है? क्या प्रधानमंत्री समझते हैं चूंकि बहुमत उनके साथ है, कांग्रेस पार्टी के सदस्य प्रचुर मात्रा में यहां विद्यमान हैं और वे कैसा भी समझौता करें, अपने वचन से भी मुकर जायें फिर भी कोई उनके खिलाफ नहीं बोलेगा? लोकसभा में कोई नहीं बोला यह एक कटु सत्य है और इसलिये लोकतंत्र के भविष्य के प्रति मुझे आशंका होती है। किन्तु क्या यह ढंग ठीक है? एक बड़े कांग्रेस के नेता ने बंगलौर में कहा कि कांग्रेस के सदस्य अपनी अन्तरात्मा की आवाज को दबा रहे हैं, वे हाई कमाण्ड के सामने मुंह नहीं खोल सकते, क्योंकि चुनाव निकट आने वाला है, टिकट बंटने वाले हैं और हाई कमाण्ड यदि चाहे तो उन्हें अगले चुनाव में टिकट नहीं देगा। मैं यह आरोप नहीं लगाता। लेकिन सदन का अपमान करके, संसद की अवहेलना करके, अपने वचनों का खुला उल्लंघन करके जो समझौता हमारे माथे पर आज मढ़ा जा रहा है उसे सम्मानजनक बताने की भूल तो कोई सदस्य न करे। वे कह सकते हैं कि समझौते में भूलें हो गयीं, प्रधानमंत्री लंदन की चमक-दमक में आ गये, विल्सन की कूटनीति में फंस गये और शायद इस समझौते की धाराओं को ठीक तरह से समझ नहीं पाये।

महोदय, आपको जानकर आश्चर्य होगा कि इस समझौते पर हमारे कानूनी विशेषज्ञों की राय नहीं ली गयी। जिस समय मंत्रिमंडल में इस समझौते पर विचार हुआ था उस समय हमारे विधिमंत्री मौजूद नहीं थे। हमारे कानूनी जानकार उस समय मास्को में बैठे थे। यह समझौता एक कानूनी समझौता है और उसकी हर एक धारा का पूरी तरह से अध्ययन होना चाहिये था। किन्तु इस बात को सूक्ष्म दृष्टि से देखे बिना समझौता कर लिया गया। आज सदन से कहा जाता है कि यह फैसला मानो। हम यह फैसला कैसे मान सकते हैं?

महोदय, समझौते का इस आधार पर समर्थन होता रहा है कि इसके फलस्वरूप भारत पाकिस्तान में मित्रता कायम होगी, सद्भावना बढ़ेगी और दोनों देशों के बीच नये सम्बन्धों का अध्याय शुरू होगा। कौनसा अध्याय शुरू

हुआ, यह काश्मीर में देखिये। जब यह समझौता किया जा रहा था, जब नई दिल्ली में बैठकर इस समझौते पर दस्तखत हो रहे थे तब पाकिस्तान काश्मीर में आक्रमण की योजनायें बना रहा था और सभी सशस्त्र सैनिकों को हमारी भूमि में घुसा रहा था। क्या यह पाकिस्तान की ईमानदारी का सबूत है? अभी समझौते की स्याही सूखने भी न पाई, इस समझौते पर संसद की मुहर भी नहीं लगने पाई कि पाकिस्तान ने काश्मीर पर आक्रमण कर दिया है। प्रधानमंत्री जी कहते हैं कि कच्छ और काश्मीर का क्या संबंध है। जहां तक पाकिस्तान के साथ बातचीत करने का सवाल है मैं यह बात मानने को तैयार हूं कि हम काश्मीर के संबंध में बात नहीं करेंगे। लेकिन कच्छ और काश्मीर दोनों एक ही देश के हिस्से हैं, कच्छ और काश्मीर पर आक्रमण करने वाला भी एक ही है और उस आक्रमण का सामना करने के लिये जिस ४८ करोड़ जनता को संगठित, जागृत और तत्पर रहना है वह भी एक ही है। कच्छ में युद्ध विराम और काश्मीर में युद्ध का श्रीगणेश! कच्छ के ऊपर पाकिस्तान के साथ प्रेमवार्ता और काश्मीर की घाटी में गोलियों का आदान प्रदान!! युद्ध और शान्ति दोनों साथ-साथ नहीं चल सकते!!! दोनों देशों के विदेश मंत्रियों की बैठक स्थगित कर दी गयी, यह ठीक हुआ। किन्तु प्रश्न यह है कि काश्मीर में आक्रमण के बाद हम ऐसे अपमानजनक समझौते से एकतरफा बंधे रह सकते हैं? मान लीजिये अधिकांश सदस्य इस समझौते की हिमायत में थे। कारण व्यक्तिगत हो सकते हैं, दलगत हो सकते हैं, विचारगत भी हो सकते हैं। लेकिन काश्मीर में जो नई परिस्थिति पैदा हो गई है उसमें हमारा कर्तव्य क्या है? क्या हम इस समझौते से चिपके रहें? दिल्ली में जो कुछ होता है उसका काश्मीर की जनता पर सीधा प्रभाव पड़ेगा। हम कच्छ के मामले में दुर्बलता दिखायें और संधि चर्चा जारी रखें और दूसरी ओर पाकिस्तान काश्मीर की घाटी में हमारे नन्दनवन को जलाने की कोशिश करे, हमारे जवानों को गोलियों का निशाना बनाये, इस तरह की बात नहीं चल सकती। यह देश को युद्ध के लिये तैयार करने का तरीका नहीं है। यह देश की एकता को मजबूत करने का भी तरीका नहीं है। सरकार को फैसला करना होगा; और मैं सदन के सदस्यों से अपील करना चाहता हूं कि काश्मीर में जो नई परिस्थिति पैदा हो गयी है उसके प्रकाश में इस समझौते को देखें। हम इस समझौते से एक ओर से बंधे नहीं रह सकते।

कहा जाता है कि यह एक अन्तर्राष्ट्रीय समझौता है। मैं पूछना चाहता हूं क्या शस्त्र पाक अमरीका का समझौता अन्तर्राष्ट्रीय समझौता नहीं था और क्या उस समझौते से हमने अपने को अलग नहीं कर लिया? अभी प्रोफेसर

मुकुट बिहारी लाल जी ने उदाहरण दिया कि जर्मनी और रूस के बीच जो समझौता था वह जर्मनी के आक्रमण के साथ ही तोड़ दिया गया। कोई भी समझौता एक पार्टी को नहीं बांध सकता। एक हाथ से कभी ताली नहीं बजती है। जैसे लड़ने के लिये दो चाहियें, वैसे शान्ति के लिये भी दो चाहियें। यदि दूसरा पक्ष आक्रमण पर तुला हो तो शान्ति नहीं हो सकती। जिस तरह से हमने कच्छ में हथियार डाल दिये, समर्पण कर दिया, उससे शान्ति की रक्षा नहीं होगी। कच्छ में जो कुछ हुआ उससे हमारे जवानों का मनोबल नहीं बढ़ा, हमारे देश की प्रतिष्ठा नहीं बढ़ी। इस समझौते से तो हमारी साख को, हमारे सम्मान को और भी चोट लगी है। जो गलती हो गयी उसे सुधारा जा सकता है। कच्छ का समझौता हमेशा के लिये आलमारी में बंद किया जा सकता है। पाकिस्तान से कहा जा सकता है कि जब तक तुम नेक नीयती का सबूत नहीं दोगे तब तक कोई समझौता नहीं होगा। अगर समझौता तोड़ने के लिये ही किया जा रहा है तो समझौता करने का कोई अर्थ नहीं है। पाकिस्तान की नीयत पर हमें संदेह है और प्रधानमंत्री ने भी प्रातःकाल कहा कि पाकिस्तान शान्ति नहीं चाहता, ऐसा दिखाई देता है। तो हम फिर कच्छ के समझौते से क्यों बंधे रहें ?

प्रधानमंत्री जी कहते हैं कि हमारे संविधान की धारा ५१ में लिखा हुआ है कि हम अन्तर्राष्ट्रीय समस्याओं को मध्यस्थता या पंच फैसले से हल करने का प्रयत्न करेंगे। कच्छ में हम यही कर रहे हैं। किन्तु काश्मीर में हम यह नहीं करेंगे क्योंकि काश्मीर का प्रश्न अलग है। मैं मानता हूं कि काश्मीर का सवाल अलग है लेकिन कच्छ के संबंध में हमने ऐसा समझौता क्यों किया जो हमारे खिलाफ काश्मीर में प्रयुक्त किया जा रहा है। विदेशों में भी कुछ लोग ऐसे हैं जो कहते हैं कि काश्मीर के प्रश्न पर भी पंच फैसला होना चाहिये। हमारे देश के भीतर भी ऐसे लोग हैं जो कहते हैं कि कच्छ में जो कुछ हुआ, वही काश्मीर में भी किया जाना चाहिये। कच्छ करार तोड़ने पर अन्तर्राष्ट्रीय राय के विरुद्ध होने का हौवा खड़ा किया जाता है। क्या काश्मीर के संबंध में हम अन्तर्राष्ट्रीय राय को ठुकराकर अपनी अखंडता और अपनी प्रभुसत्ता पर कायम नहीं हैं ? मुझे आश्चर्य है कि समझौते के पक्ष में अखबारों में सम्पादकीय उद्धृत किये जाते हैं, दुनिया की राय का हवाला दिया जाता है, और कहा जाता है कि किस तरह से कच्छ के समझौते का सबने स्वागत किया है। कहा जाता है कि इस समझौते को अमरीका ने, ब्रिटेन ने और रूस ने भी स्वीकार किया है। जब हम स्वयं समझौता कर चुके हैं तो दूसरे उसे क्यों बुरा बताने लगें। जब हम स्वयं अपनी अखंडता और सम्मान की रक्षा के लिये तैयार नहीं हैं तो पराये उसकी चिंता क्यों करने लगे ?

संसार के प्रायः सभी देश ऐसे हैं जो दूसरों की कीमत पर शान्ति को कायम देखना चाहेंगे। जब हम स्वयं युद्ध से भागते हैं तो कौन ऐसा होगा जो हमसे कहेगा कि पाकिस्तान से युद्ध करो। यदि हम किसी भी कीमत पर पाकिस्तान के साथ शान्ति कर लें, तो हमारे प्रधानमंत्री शान्ति के अवतार कह कर पुकारे जायेंगे, इसमें मुझे कोई संदेह नहीं है। मैं शान्तिपूर्ण तरीकों से समस्याओं को हल करने के खिलाफ नहीं हूं। अंतर्राष्ट्रीय समस्यायें यदि शान्ति के तरीके से हल होती हैं तो उसका स्वागत होना चाहिये। मगर क्या कच्छ में कोई अंतर्राष्ट्रीय समस्या पैदा हो गयी थी या काश्मीर कोई अंतर्राष्ट्रीय प्रश्न है ? कच्छ में आक्रमण किया गया। अगर पाकिस्तान आक्रमण न करता, दोनों देशों के अधिकारी मिलते, बात करते, नक्शों की भेंट होती, सबूत देखे जाते, दस्तावेज देखे जाते और १९५९-६० के समझौतों के अनुसार जो हमारी दृष्टि से गलत थे, लेकिन जिनसे हम बंध गये थे, सीमांकन पर विचार होता तो मैं उसका विरोध न करता। किन्तु पाकिस्तान ने आक्रमण करके सारी स्थिति बदल दी। समझौतों का आधार ही समाप्त हो चुका। पूरा आक्रमण हटना चाहिये था। आक्रमण के लिये पाकिस्तान को सजा मिलनी चाहिये थी। हमने उलटे आक्रमण पर पर्दा डाल दिया। इस समझौते के द्वारा आक्रमणकारी और आक्रान्त एक ही तराजू में रख दिये गये। दुनिया वाले हमें जब एक ही नजर से देखते हैं, तो हमें दुख होता है और हम कहते हैं कि वे पाकिस्तान को हमलावर कहने से इनकार कर रहे हैं। किन्तु हमने स्वयं क्या किया है ?

महोदय, जो युद्ध से भागता है, युद्ध उसके पीछे भागता है। आक्रमणकारी के सामने समर्पण करने से उसकी भूख बढ़ती है। तुष्टीकरण से कभी शान्ति नहीं होती। शान्ति कायम करने का एक तरीका चेम्बरलेन का है जो भूमि देकर (अपनी नहीं दूसरों की) हिटलर को संतुष्ट करना चाहता था, किन्तु जिसने विश्व के महायुद्ध को निकट बुला लिया। शान्ति कायम करने का दूसरा तरीका केनेडी का है जिसने अपनी सीमा से ९० मील दूर क्यूबा में रूस के हथियारों को अपने राष्ट्र के लिये चुनौती समझा और रूस को मजबूर कर दिया कि वह हथियारों को वापस ले जाय। उससे अमरीका के हितों की भी रक्षा हो गयी और युद्ध भी टल गया। पाकिस्तान से किये गये समझौते युद्ध निकट लाते हैं, पाकिस्तान की आक्रामक प्रवृत्तियों को बढ़ाते हैं और इसलिये कहीं न कहीं लक्ष्मण रेखा खींचनी होगी; और आज वह समय आ गया है।

महोदय, प्रधानमंत्री जी ने एकता की अपील की है। एकता को किसने

तोड़ा है ? देश के हौसले को किसने पस्त किया है ? हम जब समझौते का विरोध करते हैं, तो राजनीतिक कारण हमारे सामने नहीं हैं। आप मेरा ३ मई का भाषण उठा कर पढ़िये। सब सदस्यों ने उसको सुना था। मैंने सरकार का पूरा समर्थन किया था, और उन विरोधी दलों की निन्दा की थी जो सरकार के मार्ग में बाधा डाल रहे थे। मगर मैंने एक बात कही थी कि यदि सरकार लड़खड़ायेगी, तो हम डटकर उसका मुकाबिला करेंगे। कच्छ समझौते के खिलाफ हमारा आन्दोलन इसीलिये चल रहा है। यह दलगत आन्दोलन नहीं है। प्रधानमंत्री यदि राष्ट्रीय एकता कायम रखना चाहते हैं, तो मैं उनसे कहूंगा कि देश को दिये गये वचनों का पालन करना सीखें। देश के मनोबल को बनाये रखने का तरीका पहचानें। आज देश में असंतोष है। जनता क्षुब्ध हो रही है। परिस्थिति विस्फोटक है। कहीं अन्न की कमी है। कहीं चीजों के दाम बढ़ रहे हैं। कहीं प्रान्तीयता और साम्प्रदायिकता सिर उठा रही है। इस संकटकाल में देश को राष्ट्रीयता के आधार पर ही एक रखा जा सकता है।

देश के कोने-कोने से १६ अगस्त को दिल्ली में लाखों लोग आये। किन्तु एक भी अप्रिय घटना नहीं हुई। गृहमन्त्री बड़े चिंतित थे कि लाखों लोग आ रहे हैं, क्या होगा। किन्तु एक घटना नहीं हुई। अनुशासन में बंधे हुये, देश-भक्ति से प्रीतप्रीत लोग, संसद का दरवाजा खटखटाने आये थे, क्योंकि उनकी शान्तिपूर्ण तरीकों में, लोकतंत्र के मार्ग में, निष्ठा है। लेकिन अगर संसद अपना कर्तव्य नहीं करेगी और शासन संसद की पीठ के पीछे जनता की भावनाओं की अवहेलना करके अपमानजनक समझौते करेगा तो फिर लोगों की भावनाओं को वश में नहीं रखा जा सकता। हम एकता की अपील का स्वागत करते हैं, लेकिन एकता कायम करने का तरीका प्रधानमंत्री को समझना चाहिये। धन्यवाद।